संघीय व्यवस्था में राज्यपालों की भूमिकाः विविध वैधानिक पहलुओं का अध्ययन (उ0 प्र0 के विशेष सदर्भ में)

डॉ0 आशुतोष पाण्डेय,
एसो0 प्रो0, राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन विभाग,
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत
Email: bins.0280@gmail.com

सारांश

विगत वर्षो में केंद्र व राज्योंके मध्य सबसे अधिक विवादास्पद प्रश्न, राज्यों मे राज्यपालों की भूमिका से सम्बन्धित रहा है। न केवल कांग्रेस अपितु मिली–जुली सरकारों सहित भाजपा नीति गठ्बंधनीय सरकार ने भी अवसर मिलने पर इस पद का प्रयोग राजनीतिक हितों के लिये किया। संविधान निर्माताओं ने भी कल्पना नहीं की थी कि यह पद संघीय सरकार हेतु अभिकर्ता के रुप मे उभरेगा। आज स्थिति यह है कि इस पद को समाप्त करने की मांग की जाती है। ऐसा क्यों हुआ? इसका विवेचन प्रस्तुत शोधपत्र मे दियाजा रहा है–

मुख्य शब्द– *अनुच्छेद 356, सरकारिया आयोग, सहकारी संघबाद, कार्यपालिका, संसदीय शासन प्रणाली*

प्रस्तावना

भारत के राज्यों में भी केन्द्र के समान संसदीय व्यवस्था को अपनाया गया है। संविधान के भाग 6 (अनु0 152–213 व अनु0 239–240) में राज्य कार्यपालिका का विस्तार से वर्णन किया गया हैं। संविधान सभा में राज्यों के राज्यपालों की नियुक्ति के सम्बन्ध में कई प्रकार के सुझाव दिये गये थे लेकिन सभा में यह सुझाव स्वीकार किया कि राज्यपाल का नामांकन राष्ट्रपति द्वारा हो। ए0 के0 अय्यर ने इस सम्बन्ध मे संविधान सभा में कहा था कि समरुपता की प्राप्ति के लिये, राज्यपाल तथा मंत्रीपरिषद के सदस्यों के बीच स्वस्थ सम्बन्धों की स्थापना के लिये यही अच्छा है कि हम कनाडा के अनुरुप ही करें।[1]इस प्रकार किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा नामांकित होता है। लेकिन राष्ट्रपति उसकी नियुक्ति केंद्रीय मंत्रिमण्डल के परामर्श से करता है। संविधान यह व्यवस्था करता है कि संसदीय प्रणाली के अधीन राज्यपाल संविधानिक प्रधान होगा। वास्तविक कार्यपालिका शक्ति मंत्रीपरिषद मे निहित होगा, जो विध ाानमंडल के प्रति उत्तरदायी होगा। ऐसी स्थिति मे यदि राज्यपाल प्रत्यक्ष मत द्वारा निर्वाचित होगा तो यह अपने आप को मुख्यमंत्री से वरिष्ठ समझेगा क्योकि मुख्यमंत्री तो एक ही निर्वाचन क्षेत्र

से चुना जाता है। संविधान सभा मे डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने कहा था, जब संपूर्ण कार्यपालिका शक्ति मंत्रीपरिषद मे निहित हैं तब एक और व्यक्ति जो समझता है कि उसके पीछे पूरा प्रांत है और इसलिये वह अपने विवेकानुसार आगे बढकर प्रांत के शासन मे हस्तक्षेप कर सकता हैं तो इससे लोकतंत्र विनष्ट हो जायेगा।[2]

राज्य मे राज्यपाल की वही स्थिति है जो केंद्र मे राष्ट्रपति की होती है। राज्यपाल को राष्ट्रपति के समान सिर्फ कूटनीतिक, सैनिक तथा आपातकालीन अधिकार प्राप्त नही है। संविधान के अनुसार राज्य की समस्तकार्यपालिका शक्तियां राज्यपाल मे निहित होगी ओर इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से करेगा (अनु0 154(1)) भारतीय संविधान के अन्तर्गत राज्यपाल की दोहरी भूमिका है। संविधान निर्माता भारत में एक ऐसा संघीय व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे जिसमे सहयोगी संघवाद की धारणा के आधार पर केंद्र व राज्य मे सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो सके और प्रशासनिक एकरुपता तथा राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके और उनके द्वारा राज्यपाल के पद की व्यवस्था इस लक्ष्य की पूर्ति के एक साधन के रुप मे की गयी। चतुर्थ आम चुनावों के बाद राज्यपालों के अधिकार क्षेत्र नियुक्ति के तरीके आदि को लेकर केंद्र व राज्यों मे मदभेद उत्पन्न हुए और केंद्र या राज्य के सम्बन्धों के निर्धारण मे राज्यपाल की भूमिका विवादास्पद होती चली गयी। राज्यपाल की स्थिति एक विवास्पद प्रश्न है।कुछ लोगो का कहना है कि राज्यपाल केवल सांविधानिक प्रधान है। इसके विपरीत दूसरे लोगों का कहना है कि राज्यपाल राज्य का वास्तविक शासक है। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि उन सिद्धान्तों के अनुसार जिन पर राज्यो का शासन आधारित है, राज्यपाल को प्रत्येक कार्य मे मंत्रीपरिषद की सलाह आवश्यक रुप से माननी होगी और कोई भी कार्य वह स्वविवेक से नही कर सकता।[3]डॉ0पायली के अनुसार राज्यपाल मंत्रिपरिषद का सूझ–बूझ वाला परामर्शदाता है जो राज्य की अशांत राजनीति मे शांत वातावरण पैदा कर सकता है।[4] एम0 एल0 सिंघवी के अनुसार, मंत्रीपरिषद के बहुमत की जांच करना वह अपना ऐसा स्वविवेकीय अधिकार समझ सकता है जिससे वह मंत्रीपरिषद के परार्मश के विरुद्ध भी अपनी इच्छा से विधानसभा का अधिवेशन बुला सकता है,[5] साधारणतः वह ऐसा नही कर सकता, लेकिन असाधारण काल मे वह ऐसा कर सकता है। राज्यपाल केवल नाममात्र का अध्यक्ष नही है। वह एक ऐसा अधिकारी है जो राज्य के शासन मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।[6]

चतुर्थ आम चुनावों के बाद भारतीय राजनीति में एक नया मोड़ आया। अब संघ प्रणाली का क्रियान्वयन एक दल प्रधान ढॉचे मे होने लगा। इन चुनावो के बाद काग्रेस का एकाधिकार समाप्त हुआ और अनेक राज्यों मे गैर कांग्रेसीदलों की सरकारें बनीं। इसी अवसर मे कई राज्यों मे क्षेत्रीय एंव प्रादेशिक दलों का अभ्युदय हुआ। इस प्रकार के राजनीतिक वातावरण बनने का कारण राज्यों में राज्यपालों की भूमिका को संदिग्ध माना जाने लगा। ऐसी अवस्था मे कतिपय राज्यपालो ने तो सुनिश्चित लोकतांत्रिक अभिसमयों का भी पालन नही किया और ऐसा आभास मिलता था कि इन्होनें केंद्रीय सरकार के एक एजेण्ट की भूमिका का निर्वाह करने मे ही अपने

कर्तव्य की इतिश्री मान ली। असम मे राज्यपाल के पद की विवादास्पद भूमिका 1992 से ही देखी जा सकती है।

राज्यपाल पद को सर्वाधिक विवादास्पद बनाने वाले राज्यपाल है, मुख्यतः रोमेश भण्डारी तथा सुंदर सिंह भण्डारी। रोमेश भण्डारी उत्तरप्रदेश के राज्यपाल के तौर पर उसी प्रकार के राजनीतिक पक्षपात मे लगे हुए थे, जिसका परिचय बिहार में सुंदर सिंह भण्डारी ने दिया है। अंतर केवल यही था कि एक बी0जे0पी0 की सरकार को हटवाना चाहते थे तो दूसरे राष्ट्रीय जनता दल की सरकार को।

धारा 356 का उपयोग–

संविधान के अनुसार संघीय सरकार को यह उत्तरदायित्व सौंपा गया है कि वह प्रत्येक राज्य की बाहरी आक्रमणतथा आंतरिक अशांति से रक्षा करेगा तथा यह सुनिश्चित करेगा कि प्रत्येक राज्य की सरकार संविधान के उपबन्धो के अनुसार चलाई जाये। अनु0 356 के अनुसार अगर राष्ट्रपति को राज्यपाल के प्रतिवेदन पर या अन्य किसी प्रकार से समाधान हो जाये कि ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो गयी हैं कि किसी राज्य का शासन संविधान के अनुसार नही चलाया जा सकता तो वह संकटकाल की घोषणा कर सकता है। यह संघ सरकार के हाथों में एक ऐसा संवैधानिक अस्त्र है जिससे वह लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है। अब तक इसका प्रयोग लगभग 120 बार तक किया जा चुका है। अधिकांशतः इसका प्रयोग राजनीतिक कारणों से किया जाता रहा है, यह राज्य सरकार को अस्थिर करने के लिये केंद्र के हाथ मे मजबूत अस्त्र रहा है। सर्वप्रथम इस अनुच्छेद का उपयोग 1951 मे पंजाब मे किया गया था। उसके बाद कई राज्यो मे इसका प्रयोग किया गया।

संविद सरकारें एवं राज्यपाल का पद तथा धारा 356 का प्रयोग

चौथे आम चुनाव कोमतपत्र के माध्यम से राजनीतिक क्रांति का नाम दिया जाता हैं, क्योंकि इन चुनावों ने भारत की राजनीतिक स्थिति मे महत्वपूर्ण परिवर्तन किया। इन चुनावों के बाद विभिन्न राज्यों में राज्यपाल की भूमिका महत्वपूर्ण हो गयी। जिन तत्वों ने इस स्थिति को जन्म दिया था उनमे सबसे पहले महत्वपूर्ण तत्व था भारतीय संघ के लगभग आधे राज्यों मे मिली–जुली सरकारे स्थापित हुई थी जो एक दलीय सरकारो कि तुलना मे कमजोर थी। 90के दशकमे केंद्र में भी मिली–जुली सरकारों की स्थापना हुई, जिसने भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था को अस्थिरता प्रदान की है। मिली–जुली सरकारों की स्थिति मे यह स्वाभाविक था कि राज्यपाल अनेक बार स्वविवेक से कार्य करते और राज्यपाल ने जितनी अधिक सीमा तक स्वविवेक से कार्य किया, उतनी ही सीमा तक यह पद विवाद का विषय बन गया। इस प्रकार के विवाद मुख्यतः राज्यपाल द्वारा मुख्यमंत्री की नियुक्ति, पदच्युति व विधानसभा को भंग करने आदि प्रश्नों को लेकर उत्पन्न हुए।

पिछले दो दशकों की मिली–जुली भारतीय राजनीति में राज्यपाल की भूमिका विशेष रुप से धारा 356 के सन्दर्भ में काफी विवाद का विषय बनी है। साथ ही इस अवधि मे राष्ट्रपति शासन का सर्वाधिक बार प्रयोग किया गया है।इसका प्रमुख कारण केंद्र व राज्य मे पृथक–पृथक

सरकारो का होना है और फिर यदि केंद्र मे एक दल की सरकार न होकर गठबंधन सरकार हो, तो राज्यपाल के पद का चर्चा का विषय बनना विवाद का विषय है। मिली–जुली सरकारो ने संसदीय प्रणाली को काफी हद तक प्रभावित किया है। इसमें राज्यपाल का पद संविधान की व्यवस्था का एक अंग न रहकर इसमें राजनीतिक दांव–पेंच का भाव ज्यादा हो गया हैं। ऐसे कई उदाहरण देखें जा सकते है जबकि राज्यपाल ने संवैधानिक व्यवस्थाओं को ताक मे रखकर अविवेकर्पूण निर्णय लिये जैसे 1967 में हरियाणा, 1970 में बिहार, 1976 में तमिलनाडु और उड़ीसा, 1984 मे आंध्रप्रदेश और गुजरात, 1998 मे उत्तरप्रदेश और 1999 मे बिहार आदि राज्यों मे राज्यपाल और केन्द्रीय मंत्रीमण्ड्ल के यह कृत्य संवैधानिक प्रावधानों व कानूनी स्थिति के सर्वथा विपरीत थे।

उत्तरप्रदेश के संदर्भ मे राज्यपाल का पद व धारा 356–

संविधान के अनुसार 356 मे स्पष्ट रुप से वर्णित है कि यदि राज्य सरकार संविधान के अनुरुप काम नही कर रही हो तो उसे हटा कर राज्य मे राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सकता हैं, पर कई बार इसका प्रयोग राजनीतिक कारणों से किया जाता रहा है। उ0प्र0 में रोमेश भण्डारी ने भाजपा–बसपा संयुक्त सरकार से बसपा के अलग हो जाने पर यह मान लिया कि सरकार बहुमत खो बैठी हैं। उनको केंद्र के मंत्रीमंडल की मदद भी प्राप्त थी और उन्होंने धारा 356 के तहत राष्ट्रपति शासन लागू करने की सिफारिश कर दी। उन्होंने कांग्रेस नेता जगदम्बिका पाल को मुख्यमंत्री नियुक्त कर दिया परंतु उन्हें राज्य विधानसभा में शक्ति परीक्षण करना पड़ा जिसमें जगदम्बिका पाल कल्याण सिंह से हार गये और कल्याण सिंह की सरकार बच गयी। क्या यह राज्यपाल की भूमिका का पक्षपाती तथा धारा 356 के दुरुपयोग को नही दर्शाता ? उत्तरप्रदेश में राज्यपाल के द्वारा राष्ट्रपति शासन लगाने की संस्तुति केंद्रीय मंत्रिमण्डल की उस पर सहमति, राष्ट्रपति द्वारा मंत्रिमण्डल की सिफारिश को पुनर्विचार के लिये वापस लौटाना और मंत्रिमण्डल द्वारा इसके बाद अपना निर्णय बदलने से जहाँ राष्ट्रपति के0आर0 नारायणन ने भारतीय लोकतंत्र में एक इतिहास रचा वही राष्ट्रपति शासन के लिये उत्तरदायी अनु0 356 और राज्यपाल का पद सुर्खियों में आया जिससे राज्यपाल पद की गरिमा तथा अनु0 356 के क्रियान्वयन पर प्रश्न चिन्ह खड़ा हुआ ?

क्या धारा 356 का उपयोग–दुरुपयोग उचित है ?

यह स्पष्ट है कि इस अनुच्छेद का ठीक से पालन नही किया गया है तथा हर प्रधानमंत्री के शासन काल मे दुरुपयोग करने कि कोशिश की गयी है, तो क्या यह मान लिया जाये कि इसका अब तक समस्त प्रयोग नैतिक व संवैधानिक दोनों दृष्टियों से गलत था ? परंतु ऐसा कहना उचित नही होगा। क्योकि भारत में कई बार राज्यों में ऐसी समस्यायें खड़ी हो जाती हैं जब राष्ट्र कि एकता और अखंडता को बनाये रखने के लिये इसका प्रयोग करना पड़ता है। भारत जैसे विविधता वाले देश में राज्यों की स्वतंत्रता की मांगउठतीरही है।अतः इस अनुच्छेद के माध्यम से इस पर रोक लगायी जा सकती है। इन परिस्थितियों में माना जाता है कि अनु0 356 के उपयोग को लेकर एक धारणा कायम नही की जा सकती है। इसके सद्पयोग भी है और दुरुपयोग भी

है। जरुरत है ज्यादा से ज्यादा सदुपयोग की। इसके दुरुपयोग के खिलाफ दो दबाव बने। एक, अदालत हस्तक्षेप कर ठोस आधार न होने पर बर्खास्तसरकार को बहाल कर सकती है, दूसरा संवैधानिक भावना के खिलाफ होने के कारण राष्ट्रपति केंद्र सरकार को कठघरे मे ला सकते हैं। माना जाता है कि अगर दोनो संवैधानिक संस्थायें इसी प्रकार क्रियाशील रहीं, तो अनु0 356 का दुरुपयोग बहुत हद तक रुक सकेगा।

निष्कर्ष एंव सुझाव–

वर्तमान समय में राज्यपाल का पद इतना विवादास्पद तथा संदिग्ध हो गया है कि विशेष रुप से धारा 356 के सन्दर्भ में जिसका प्रयोग राज्यपाल राष्ट्रपति से करवाने के लिये अपने स्वविवेक का प्रयोग कर सकता है। धारा 356 के दुरुपयोग ने इसकी सार्थकता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। यदि शासनतंत्र की विफलता राष्ट्रपति के समाधान का कोई अर्थ नही है तो इन्हें संविधान से अलग कर संसद का समाधान सर्वोपरि मान लेना चाहिये। राज्यपाल तथा राजनीतिक दलो को यह नहीं भूलना चाहिये कि लोकतंत्र में लोक की उपेक्षा नही की जा सकती। आज आवश्यकता स्वार्थसिद्धि एंव सत्ता के मोह से ऊपर उठकर लोकहित की रक्षा करने की है। आज आवश्यकता है कि सभी राजनीतिक दल इस संवैधानिक साधन का प्रयोग सरकारिया आयोग की रिर्पोट, न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णय एवं संविधान की भावना को ध्यान में रखकर इसका प्रयोग किया जाये। अतः आवश्यकता है कि अनु0 356 के संदर्भ में राजनीतिक दलों के मध्य आम सहमति बनायी जाये जिससे संविधान एवं राष्ट्रीय अखंडता को सुरक्षित रखा जा सके।[7] राज्यपाल की वास्तविक स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास बहुत से विद्वानों ने किया है। डी0डी0 बसु के शब्दों मे, "राज्यपाल केवल दिखाने का प्रधान नही होगा। अगर वह कार्यशील तथा अच्छा राज्यपाल है तो सत्तारुढ़ दल के विरोधियों से सम्पर्क साधकर उन्हें कई अच्छे कार्यों के लिये राजी कर सकता है और प्रशासन को सुचारु बना सकता है।"[8] डॉ0 पायली का कहना है, "यह एक कड़ी है जो संघ तथा राज्यों को जोड़ता है और संघ राज्य के सम्बन्धों को निर्धारित करता है। वह संविधान का आवश्यक भाग है जो एक आवश्यक उद्देश्य को पूरा करता है तथा आवश्यक सेवा प्रदान करता है।[9] डॉ0 बी0 जी0 खैर ने संविधान सभा मे कहा था कि एक अच्छा राज्यपाल बहुत लाभ पहुंचा सकता है और एक बुरा राज्यपाल बहुत दुष्टता भी कर सकता है यद्यपि संविधान में उसको बहुत कम शक्ति दी गयी है।"[10]

अतः स्पष्ट है कि राज्यपाल एक संवैधनिक प्रधान है और आवयश्कता है कि वह अपने पद का प्रयोग अनु0 356 में वर्णित संविधान की मूल भावनाओं के अनुसार ही करे जिससे राष्ट्र की एकता और अखण्डता बनी रहे।

सन्दर्भ

1. अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, CAD खण्ड–7, पृ0 **432**
2. डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ,CAD खंड–7, पृ0 **432**
3. डॉ0 अम्बेडकर, CAD खंड–7, पृ0 **430**

4. एम0 वी0 पायली, *इंडियाज कांस्टीट्यूशन,* एसचन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृ0 **234**
5. एम0 एल0 सिंघवी, स्टेटसमैन,12 नव0 1967
6. एम0 बी0 पायली, *इण्डियाज कांस्टीट्यूशन,* एसचन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, 2016,पृ0 **238**
7. एन0 एस0 गहलोतः *भारतीय राजनीतिक व्यवस्थाः* दशा एवं दिशा, 1996**,** South Asia Books**,** पृ0 **82**
8. D. D. Basu, *Introduction to the Constitution of India*, 21st Edition, LexisNexis Publication, 2015, Page No. **254**
9. एम0 वी0 पायली, *इंडियाज कांस्टीट्यूशन,* एसचन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृ0 **240**
10. बी0 जी0 खैर, CAD ,खंड सात, पृ0 **434**